सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने में भारतीय संविधान की भूमिका

प्रोफेसर रेखा सक्सेना | राजनीति विज्ञान विभाग की विभागाध्यक्ष और प्रोफेसर, सामाजिक विज्ञान संकाय, दिल्ली विश्वविद्यालय।
ईमेल: rsaxena@polscience.du.ac.in

'सुधारवादी संविधानवाद' पर ज़ोर देने के क्रम में सामाजिक न्याय के लक्ष्य तक पहुंचने के लिए राज्य का हस्तक्षेप आवश्यक है। राष्ट्रवादी आंदोलन के दौरान संविधान सभा की चर्चाओं और बहसों के परीक्षण पर ज़ोर देना उस मान्यता पर आधारित है कि हमारी इतिहास में अवधारणाएं महत्वपूर्ण हैं। मौलिक अधिकारों का लक्ष्य एक ऐसे समाज की स्थापना करना है, जो सामाजिक बदलाव को बढ़ावा दे, जिसमें सभी नागरिक समान रूप से किसी बाध्यता अथवा बाधा से मुक्त हों चाहे वे राज्य द्वारा अथवा समाज द्वारा लागू किए गए हों। एक न्यायसंगत समाज के लिए पूर्व शर्तों को स्थापित करने में राज्य की क्षमता होना संविधान के मुख्य उद्देश्यों में से एक है। सुधारवादी संविधानवाद की अवधारणा समाज न्याय के आदर्श के इर्द-गिर्द घूमती है।

ग्रैनविले ऑस्टिन जैसे विद्वानों ने भारतीय संविधान को सामाजिक क्रांति का माध्यम बताया है। भारतीय संविधानवाद को उदारवादी संविधानवाद की सीमित आशंकाओं से अलग करने के लिए, कल्पना कन्नबिरन (2012) और उपेंद्र बख्शी (2008) के द्वारा 'विद्रोही संविधानवाद' और 'सुधारवादी संविधानवाद' की रूपरेखा तैयार की गई है। संविधान सभा के सदस्यों ने इस बात को दर्शाया है कि किस प्रकार भारत के संविधान में समाज को नया रूप देने की शक्ति निहित है।

भारतीय संविधानवाद पर लिखे गए लेखों में इस बात पर ज़ोर दिया गया है कि यह उदारवादी संविधानवाद के सीमित उद्देश्यों से किस प्रकार भिन्न है। उदय मेहता (2010) ने भारतीय संविधानवाद (बीसवीं शताब्दी को दर्शाने वाले) और अमरीकी संविधानवाद (अठारहवीं सदी को दर्शाने वाले) के बीच अंतर स्पष्ट किया है। अमरीकी संविधानवाद की नींव सत्ता के प्रति गहरे अविश्वास पर आधारित थी, जिसमें निरंकुश शासक सिर्फ एक उदाहरण था। इस प्रकार, इस संविधानवाद का औचित्य राजनीतिक सत्ता के अधिकार-क्षेत्र

को प्रतिबंधित करना, उस पर अविश्वास करना और उसे सीमित करना था। मेहता का तर्क है कि बीसवीं सदी में अधिकांश रूप से और विशेष तौर पर भारत में संविधानवाद इस प्रकार की संयमित और नियंत्रित सत्ता तथा राजनीति की अवधारणा का पालन नहीं करता है। यह संविधानवाद, सत्ता की सीमा को परिभाषित करने के साथ-साथ उसके कार्य-क्षेत्र का विस्तार करता है और इसे बढ़ावा देता है। उनके अनुसार केवल भारतीय संविधान सही मायनों में विभाजन के क्रांतिकारी आंदोलन को दर्शाता है क्योंकि यह समय तथा इतिहास के साथ राजनीति के संबंध के समापन की घोषणा करता है और जाति तथा धर्म जैसी ऐतिहासिक प्रथाओं को राजनैतिक सत्ता में बदलाव के अधीन लाता है। इसी तरह, राजीव भार्गव (2008) कहते हैं कि भारतीय संविधान का उद्देश्य समाज को स्थापित सामाजिक वर्गीकरण की बाधाओं से मुक्त कराना और स्वतंत्रता, समानता और न्याय के एक नए युग की शुरुआत करना था। उनका मानना है कि भारतीय संविधान, संवैधानिक सिद्धांत में उल्लेखनीय प्रगति का प्रतीक है क्योंकि यह ऐतिहासिक रूप से सत्ता से वंचित रखे गए लोगों को अस्तित्व का एक ठोस आधार प्रदान करता है जिन्हें अन्य लोगों की तुलना में कुछ विशेष अधिकार दिए गए हैं।

कुमार (2014) के अनुसार, 1940 के दशक में नए संविधान के निर्माण की प्रक्रिया पर भारी अपेक्षाएं और मांगें रखी गई। यह सोचा गया था कि इससे लिंग, जाति और धर्म के आधार पर चल रही शोषण की व्यवस्था ख़त्म हो जाएगी और गहरे विषम सामाजिक वर्गीकरण की संरचना में अत्यंत जरूरी बदलाव आएंगे और इससे प्रत्येक नागरिक के लिए गरिमापूर्ण जीवन जीना और क़ानून के तहत उन्हें समान अधिकार मिलना संभव हो सकेगा। भारतीय संविधान को

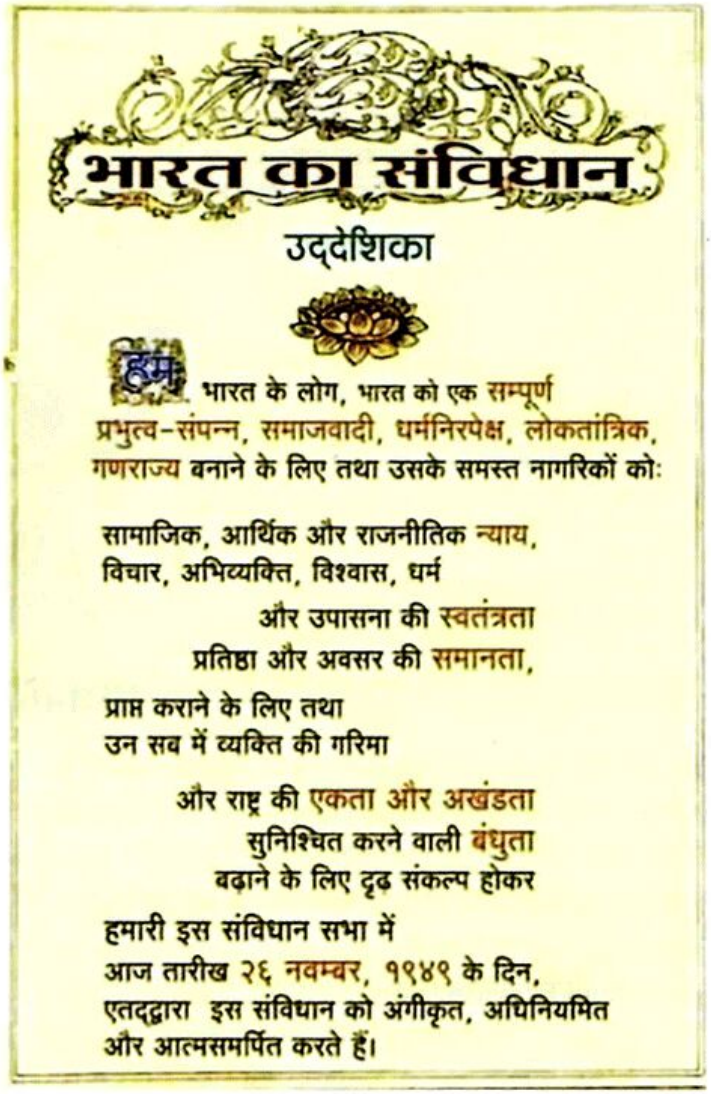

स्वीकार किए जाने के साथ ही करोड़ों लोगों का जीवन बदल गया; विशेष रूप से गरीबी वाले क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को पहली बार समान अधिकार प्राप्त होने और उनके साथ समान व्यवहार होने की उम्मीद मिली।

खोसला (2020) इस बात को रेखांकित करते हैं कि प्राधिकार का वितरण और नियमों तथा विनियमों को स्थापित करने के अलावा संविधान का एक अनुदेशात्मक प्रकार्य है, जिसका उद्देश्य लोकतांत्रिक नागरिक के विकास को बढ़ावा देना है। इस तर्क का आधार आंबेडकर का यह दावा है कि भारत में संवैधानिक नैतिकता को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। आंबेडकर आगे यह तर्क देते हैं कि भारतीय संविधान को भारत सरकार अधिनियम, 1935 की निरंतरता के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए, क्योंकि 1935 के अधिनियम से अनेकों धाराएं संविधान में शामिल किए जाने के बावजूद, संविधान में लोकतंत्रीकरण की व्यवस्था पहले की व्यवस्थाओं से बहुत हद तक अलग थी। राष्ट्रवाद के आंदोलन के दौरान संविधान सभा के विचार-विमर्श और चर्चा की समीक्षा में इस मत पर ज़ोर दिया गया कि इतिहास में विचारों का बहुत महत्व है। खोसला

सामाजिक, न्याय और अधिकारिता मंत्रालय
भारत सरकार

ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के संरक्षण अधिनियम, 2019 (अधिकारों का संरक्षण) के तहत ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के अधिकारों के उल्लंघन के लिए निम्नलिखित दंड निर्धारित किये गये हैं:

- धर्मांतरण: कोई भी व्यक्ति या संस्था, रोज़गार, शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल और सार्वजनिक स्थानों तक पहुंच जैसे मामलों में ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के साथ भेदभाव करना अधिनियम के तहत दंडनीय है।
- शारीरिक, कामुक, मौखिक, भावनात्मक या आर्थिक दुर्व्यवहार: अधिनियम ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के प्रति किसी भी प्रकार के दुर्व्यवहार को अपराध मानता है और दंड का प्रावधान करता है, जिसमें निम्नलिखित शामिल हो सकते हैं:
- कारावास कुछ महीनों से दो साल तक की अवधि के लिए
- दोषी व्यक्ति को दण्ड का भागी भी ठहराया जा सकता है, जिसका निर्धारण न्यायालय द्वारा किया जाता है।

यह तर्क देते हैं कि भारतीय संविधान के निर्माता क्रांतिकारी थे, क्योंकि उन्होंने साम्राज्यवादी दार्शनिक धारणाओं को अस्वीकार किया और संविधान के अनुच्छेदों के संहिताकरण द्वारा एक केंद्रीकृत राज्य की स्थापना और व्यक्तियों को जाति और धर्म जैसी सामाजिक बाधाओं से मुक्त करने के प्रयासों के माध्यम से लोकतांत्रिक नागरिकों के निर्माण का प्रयास किया।

'सुधारवादी संविधानवाद' की प्रेरणा इस विचार से उत्पन्न होती है कि सामाजिक न्याय प्राप्त करने के लिए राज्य का हस्तक्षेप आवश्यक है। यह दृष्टिकोण सामाजिक न्याय की गांधीवादी अवधारणा से बिल्कुल अलग है। ऑस्टिन यह उल्लेख करते हैं कि गांधी का मानना था कि सामाजिक न्याय का लक्ष्य हासिल करने की शुरुआत प्रत्येक व्यक्ति के नैतिक रूपांतरण से होनी चाहिए, जो हर भारतीय के हृदय और मस्तिष्क से उत्पन्न हो और पूरे समाज में फैल जाए। सुधार सरकार द्वारा ऊपर से थोपे नहीं जाने चाहिए; बल्कि, एक परिवर्तित समाज ऐसा हो जहां किसी सरकारी विनियमन या निगरानी की आवश्यकता ही न हो। संविधान सभा में एस एन अग्रवाल जैसे गांधीवादी विचारधारा के समर्थकों ने एक ऐसे राज्य की वकालत की जिसका न्यूनतम हस्तक्षेप हो। अग्रवाल ने स्वतंत्र भारत के लिए एक गांधीवादी संविधान का प्रस्ताव रखा, जिसमें सरकार के न्यूनतम हस्तक्षेप और व्यक्तिगत भलाई के प्रति बढ़ी हुई जिम्मेदारी की वकालत की गई थी। संविधान सभा में गांधीवादी संविधान का एक ऐसा वैकल्पिक प्रस्ताव दिया गया था जो यूरोपीय और अमरीकी परंपराओं पर आधारित था और जिसमें प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित प्रशासन की व्यवस्था की गई थी। यद्यपि इन संविधानों की शुरुआत के समय निष्पक्षता का दृष्टिकोण रखा गया होगा लेकिन समय के साथ-साथ इन्होंने नागरिक कल्याण के लिए अधिक जिम्मेदारी संभाली। परिणामस्वरूप, संविधान सभा के सदस्यों को यह निर्धारित करने की जरूरत थी कि पारंपरिक या गैर-पारंपरिक संस्थाओं में से कौन-सी सबसे प्रभावी तरीके से एक ऐसी सामाजिक क्रांति को बढ़ावा देंगी, जो भारतीय समाज की संरचना में गहरा बदलाव ला सके।

'उद्देश्य प्रस्ताव' ने सामाजिक क्रांति के उद्देश्य को स्पष्ट रूप से रेखांकित किया, लेकिन इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए किए जाने वाले उपायों की रूपरेखा प्रस्तुत नहीं की। केएम पणिक्कर ने ज़ोर देते हुए कहा कि "संविधान भारत के लोगों के प्रति इस बात की गंभीर प्रतिबद्धता है कि विधायिका नए सिद्धांतों के आधार पर समाज को सुधारने और इसका पुनर्निर्माण करने का प्रयास करेगी।" (ऑस्टिन 1972: 46) ऑस्टिन का दावा है कि वयस्क मताधिकार ने उन लाखों लोगों को सशक्त बनाया जो कभी अपने हितों के प्रतिनिधित्व के लिए दूसरों की इच्छा पर निर्भर थे। उनके अनुसार जहां मौलिक अधिकार लोगों और अल्पसंख्यक समूहों को सरकार की मनमानी और भेदभावपूर्ण कार्रवाई से बचाते हैं, वहीं संविधान के मौलिक अधिकार भाग के तहत तीन प्रावधानों का उद्देश्य व्यक्तियों को अन्य नागरिकों के अन्यायपूर्ण कार्यों से बचाना है। अनुच्छेद 17 अस्पृश्यता की प्रथा को समाप्त करता है; अनुच्छेद 15(2) यह निर्दिष्ट करता है कि किसी भी नागरिक के साथ धर्म, जाति, लिंग, नस्ल या जन्मस्थान के आधार पर दुकानों, रेस्तरां, कुओं, सड़कों और अन्य सार्वजनिक स्थलों के उपयोग में किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जाएगा; अनुच्छेद 23 उन प्रथाओं को प्रतिबंधित करता है जो, अपितु पूर्व में राज्य द्वारा समर्थित थीं

गृह मंत्रालय
MINISTRY OF
HOME AFFAIRS

अपराध की शिकायत दर्ज कराना हुआ आसान

- ई-एफआईआर-इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से शिकायत दर्ज करने का प्रावधान; पीड़ित को तीन दिनों के भीतर पुलिस स्टेशन जाकर शिकायत पर हस्ताक्षर करना चाहिए
- जीरो एफआईआर- किसी भी पुलिस स्टेशन में अपराध के खिलाफ शिकायत दर्ज करने का प्रावधान
- इलेक्ट्रॉनिक/डिजिटल साक्ष्य अब अन्य साक्ष्यों के समान ही वैध हैं

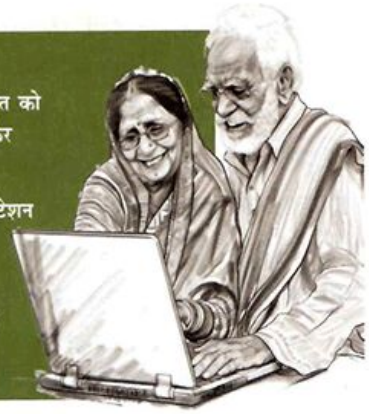

अधिक जानकारी के लिए स्कैन करें

भारतीय न्याय संहिता
भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता
भारतीय साक्ष्य अधिनियम

और मुख्यत: ज़मींदारों और किसानों के बीच संघर्षों से जुड़ी थीं। परिणामस्वरूप, राज्य को नागरिकों की विशिष्ट स्वतंत्रता के उल्लंघन पर संविधान के प्रतिबंधों का पालन करने के साथ-साथ नागरिकों के अधिकारों की सामाजिक हस्तक्षेप से रक्षा करने के लिए अपनी सकारात्मक जिम्मेदारी को भी पूरा करना चाहिए।

मौलिक अधिकारों का उद्देश्य सामाजिक क्रांति को बढ़ावा देते हुए एक ऐसा समाज स्थापित करना था जिसमें सभी नागरिकों को राज्य द्वारा या व्यापक स्तर पर समाज के द्वारा लगाए गए किसी भी दबाव या प्रतिबंध से समान रूप से स्वतंत्रता प्राप्त हो। बख्शी इस बात पर ज़ोर देते हैं कि भारतीय संविधान राज्य से परे सिविल सोसाइटी को शामिल करने के लिए अधिकारों की अवधारणा को व्यापक बनाता है। इसे अस्पृश्यता से संबंधित व्यवहारों के निषेध (अनुच्छेद 17) और बंधुआ मजदूरी तथा मानव तस्करी पर प्रतिबंध (अनुच्छेद 23) के माध्यम से देखा जा सकता है। उनका दावा है कि भारतीय संविधान सिविल सोसाइटी के भीतर क्रूरता की अभिव्यक्ति के विरुद्ध राज्य के हस्तक्षेप को सक्षम बनाने का एक आधुनिक उदाहरण प्रस्तुत करता है। इसके अलावा, भारतीय संविधान अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सशक्तीकरण के लिए एक तंत्र के रूप में कार्य करते हुए उन्हें विधायी आरक्षण प्रदान करता है तथा इन समूहों के साथ-साथ सामाजिक और शैक्षिक रूप से वंचित वर्गों के लोगों के लिए शिक्षा और सरकारी नौकरियों में अनिवार्य कोटे की व्यवस्था करता है।

भारतीय संविधान के कुछ महत्वपूर्ण प्रावधान, जो सामाजिक न्याय के लक्ष्य को प्रोत्साहित करते हैं, निम्नलिखित हैं:

1. **'हम लोग':** भारतीय संविधान की प्रस्तावना का यह वाक्यांश सुधारवादी लक्ष्य को व्यक्त करता है। 'हम लोग' एक नई पहचान देता है और उन लोगों के लिए समान अवसर और स्थिति सुनिश्चित करता है, जिनकी पहचान पहले जाति, धार्मिक और जातीय व्यवस्थाओं के द्वारा तय की गई थी। इस पहचान का आधार एक 'व्यक्तिगत' पहचान है, जो उस ढांचे से उत्पन्न सिद्धांतों से अलग हो गई है। औपनिवेशिक नियंत्रण से स्वतंत्रता की एक महत्वपूर्ण घोषणा के साथ-साथ यह क़ानूनी महत्व का भी है। कैबिनेट मिशन योजना के आदेश से, भारत की संविधान सभा की स्थापना की गई, जिसे स्वतंत्र भारत के लिए संविधान का प्रारूप तैयार करने का उत्तरदायित्व सौंपा गया था। 'हम लोग' 1947 के स्वतंत्रता अधिनियम और कैबिनेट मिशन योजना की क़ानूनी बाध्यताओं से परे उल्लेखनीय बदलाव का प्रतीक है।
2. **सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार:** किसी वर्गीकृत समाज में, 'एक व्यक्ति, एक वोट, एक मूल्य' के सिद्धांतों पर आधारित सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार को स्थापित करना एक क्रांतिकारी कदम था। राजीव भार्गव के अनुसार, भारत में पूर्ण नागरिकता केवल इस आवश्यकता के आधार पर प्रदान की जाती है कि व्यक्ति एक वयस्क सदस्य हो, जिस अवधारणा को समावेशन के स्पष्ट सिद्धांत के रूप में जाना जाता है।
3. **अस्पृश्यता का उन्मूलन:** भारतीय संविधान के अनुच्छेद 17 के तहत अस्पृश्यता को सभी स्वरूपों में अवैध घोषित किया गया है। इसका उद्देश्य अतीत को भुलाना और लंबे समय से चले आ रहे उन जातियों के निरादर को समाप्त करना था, जिन्हें समाज में अस्पृश्यता के कारण अपमान और भेदभाव का सामना करना पड़ा।
4. **समानता का अधिकार:** मार्था नुसबाम जैसे शिक्षाविदों के अनुसार, भारत का संविधान औपचारिक समानता के विचार से परे जाकर स्पष्ट रूप से वास्तविक अर्थ में समानता के विचार को मान्यता देता है और इसके अनुसार वंचित वर्गों के हितार्थ जो विशेष सुरक्षात्मक क़ानून हैं, उनकी व्याख्या गैरक़ानूनी भेद-भाव के रूप में नहीं की जानी चाहिए।
5. **राज्य के नीति-निर्देशक तत्त्व:** राज्य के नीति निदेशक तत्व सामाजिक क्रांति को अधिक स्पष्ट और संक्षिप्त रूप में परिभाषित करते हैं। ऑस्टिन (1972) के अनुसार, इन अवधारणाओं के पीछे का उद्देश्य भारत की जनता को मुक्त करना - अर्थात् उन्हें सामाजिक और प्राकृतिक बाधाओं से आजाद करना था।

निष्कर्ष:

उदारवादी संविधानवाद की प्रमुख रूपरेखा में, इसका अर्थ है नागरिकों के अधिकारों की सुरक्षा के लिए संरचनात्मक शक्ति विभाजन। राज्य को एक निष्पक्ष मध्यस्थ के रूप में देखा जाता है, जिसके पास लोगों के जीवन को प्रभावित करने की शक्ति नहीं होती। सुधारवादी संविधानवाद में फोकस निष्पक्ष राज्य और संरचनात्मक शक्ति विभाजन से हटकर राज्य की सुधारवादी क्षमता पर केंद्रित हो जाता है। संविधान का कार्य राजनीतिक व्यवस्था को व्यवस्थित करने के साथ-साथ सामाजिक व्यवस्था को भी इस प्रकार समायोजित करना होता है कि वह राजनीतिक व्यवस्था के साथ सामंजस्यपूर्ण हो सके। समाज का पुनर्निर्माण नई बुनियाद पर करना ही सुधारवादी संविधानवाद का मुख्य विषय है। एक न्यायपूर्ण समाज के लिए आवश्यक शर्तें स्थापित करने की राज्य की क्षमता को सुनिश्चित करना संविधान के प्रमुख उद्देश्यों में से एक है। सुधारवादी संविधानवाद का विचार सामाजिक न्याय के आदर्श पर केन्द्रित है। सुधारवादी संविधानवाद की प्रेरणा सरकार से समाज पर सामाजिक निष्पक्षता और सामाजिक विनियमन लागू करने की मांग करती है। यह गांधी के सामाजिक न्याय दर्शन के अनुरूप नहीं है। गांधी जी का मानना था कि सामाजिक न्याय को व्यक्तिगत सुधार के माध्यम से ही प्राप्त किया जा सकता है और जिस समुदाय ने सुधार कर लिया, वहां सरकारी हस्तक्षेप अथवा विनियमन की आवश्यकता नहीं होगी।

भारतीय संविधानवाद बदलाव के लक्ष्य को किस हद तक हासिल करने में सफल रहा? इसका उत्तर दो प्रमुख दृष्टिकोणों के माध्यम से दिया जा सकता है: उदारवादी आधुनिकतावादी मॉडल के दृष्टिकोण से देखा जाए तो, पिछले सात दशकों में एक ओर तो लोग उन पहचानों में और अधिक उलझ गए हैं जिन्हें आधुनिक समाज की स्थापना के लिए छोड़ दिया जाना चाहिए था। इसलिए, ऐसा प्रतीत होता है कि संविधान का सामाजिक परिवर्तन का लक्ष्य हासिल नहीं हुआ। हालांकि, उदार सामुदायिक मॉडल के दृष्टिकोण से, समूह अधिकारों ने एक लोकतांत्रिक ढांचे के तहत असमान आबादी को एकजुट करने में सहायता की है। तथापि, उदारवादी सामुदायिक मॉडल के दृष्टिकोण से, समूह अधिकारों ने विषम जनसंख्या को एक लोकतांत्रिक ढांचे के तहत एकजुट करने में मदद की है। परिणामस्वरूप, धर्म ने संस्थागत रूप ले लिया है, और जाति अधिक लोकतांत्रिक बन कर उभरी है।

जहां उदारवादी संविधानवाद का मुख्य उद्देश्य राज्य की सत्ता को सीमित करना है, सुधारवादी संविधानवाद समाज को समानता के आधार पर बदलने के लिए राज्य को शक्ति देने पर ज़ोर देती है। इसका कारण यह है कि शोषित पीड़ित लोगों को इतने समय से दबाकर रखने वाले ऐतिहासिक बंधनों से मुक्त होने के लिए उन्हें राज्य के द्वारा सक्रिय हस्तक्षेप की आवश्यकता है, न कि केवल राज्य की गैर-हस्तक्षेप की नीति पर निर्भर रहने की। ❑

(सह-लेखिका डॉ अलीशा धींगरा सत्यवती कॉलेज (मॉर्निंग) में राजनीति विज्ञान विभाग में सहायक प्रोफेसर हैं।)

संदर्भ

1. Austin, Granville. (1972). *The Indian Constitution: Cornerst+one of a Nation*. New Delhi: Oxford Universitty Press.
2. Baxi, Upendra. (2005). 'Postcolonial Legality' in Henry Schwarz (ed.) *A Companion to Postcolonial Studies*. Oxford: Blackwell Publishing Ltd.
3. Baxi, Upendra. (2008). 'Preliminary Notes on Transformative Constitutionalism', Paper presented at the BISA Conference, Courting Justice II, Delhi, April 27-29(unpublished).
4. Bhargava, Rajeev. (ed.).(2008). 'Outline of Political Theory of the Indian Constitution' in *Politics and Ethics of the Indian Constitution*. New Delhi: Oxford University Press.
5. Kannabiran, Kalpana.(2012). *Tools of Justice: Non-Discrimination and the Indian Constitution*. Routlegde.
6. Khosla, Madhav. (2020). *India's Founding Moment: The Constitution of a Most Surprising Democracy*. Cambridge: Harvard University Press.
7. Kumar, Kamal. (2014). Indian Constitution: The Vision of B. R. Ambedkar. IOSR Journal Of Humanities And Social Science (IOSR-JHSS), Volume 19, Issue 3, Ver. IV (Mar. 2014), pp. 29-36.
8. Mehta, Uday. 2010. Constititutionalism in Niraja Jayal and Pratap Bhanu Mehta.(eds) Oxford Companion to Indian Politics. New Delhi: Oxford University Press. 1st ed. pp. 15-27.
9. Nussbaum, Martha. (2002). Sex Equality, Liberty and Privacy: A Comparative Approach to the Feminist Critique in Zoya Hasan, E.Sridharan and R. Sudarshan. (eds.). India's Living Constitution. Permanent Black.